International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 15-06-2023, Accepted: 02-07-2023, Published: 18-07-2023
Volume 9, Issue 4, 2023, Page No. 25-27

प्रेमचंद के कथा–साहित्य में व्यक्त स्त्री–मुक्ति के स्वर

अमीनुद्दीन
शोधार्थी, अलीगढ मुस्लिम यूनिवर्सिटी, अलीगढ, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
हिंदी कथा–साहित्य में प्रेमचंद एक लेखक ही नहीं बल्कि एक युग–प्रवर्तक के रूप में पहचाने जाते हैं। उनका साहित्य भारतीय संस्कृति की पहचान व धरोहर है। उन्होंने जितनी गंभीरता से समाज की समस्याओं पर अपनी लेखनी चलाई है, उसी गंभीरता के साथ स्त्री की समस्याओं को भी चित्रित किया है। प्रेमचंद युग से पूर्व के कथाकारों ने स्त्री को आदर्शवादी स्वरूप में देखने का प्रयास किया जिसमें सुधारवादी दृष्टिकोण तो था, किंतु स्त्री की छवि आडम्बरपूर्ण और बोझिल सी प्रतीत होने लगी थी। अतः प्रेमचंद ने स्त्री की आत्मा को उसकी तमाम अच्छाइयों और बुराइयों के साथ पहली बार यथार्थवादी ढंग से चित्रित करने का प्रयत्न किया।

मूल शब्दः अस्मिता, विमर्श, पितृसत्ता, वर्जना, यथार्थवाद, आदर्शवाद इत्यादि।

कथाकार प्रेमचंद के सामने देश की गुलामी से मुक्ति का संघर्ष चल रहा था, जिसे वे पूरी संवेदना के साथ महसूस कर रहे थे। अपनी कहानियों से देश–प्रेम और स्वतंत्रता की भावना को बल देने के कारण उनका कहानी संग्रह 'सोज़े वतन' ब्रिटिश हुकूमत द्वारा ज़ब्त भी कर लिया गया, किंतु प्रेमचंद के विचारों को नहीं ज़ब्त कर पाए। इसीलिए जैनेंद्र कुमार पुरजोर तरीके से इस बात की तस्दीक करते हैं कि "प्रेमचंद का उद्देश्य कहानी कहना तो था ही, देश को जगाना भी था।"[1] इसी का समर्थन करते हुए आलोचक मैनेजर पांडेय लिखते हैं कि "बीसवीं सदी के भारतीय समाज के इतिहास की सबसे बड़ी घटना है अंग्रेजी राज की गुलामी से मुक्ति के लिए इस देश की जनता का संघर्ष। प्रेमचंद उस संघर्ष की वास्तविकताओं और संभावनाओं के अनन्य कथाकार होने के कारण बीसवीं सदी के प्रतिनिधि कथाकार भी हैं।"[2] यहां महत्वपूर्ण संयोग यह भी है कि एक दूरदृष्टा एवं संवेदनशील कथाकार होने के कारण प्रेमचंद समझ गए थे कि देश की मुक्ति से पूर्ण मुक्ति नहीं मिलेगी बल्कि मानव–मुक्ति के लिए भी प्रयास आवश्यक है। उन्हें यह स्पष्ट था कि देश आजाद होने पर समाज के हाशियाकृत लोगों को राजनैतिक आज़ादी तो मिल जाएगी किंतु सामाजिक आज़ादी नहीं मिल पाएगी। इसीलिए प्रेमचंद दलित, स्त्री, किसान, मजदूर की समस्याओं और उनके शोषण के प्रति मुखर हो गए। किसान और मजदूर की समस्या आर्थिक थी किंतु दलित और स्त्री की समस्या सामाजिक भी थी। जिसका निदान समाज की मानसिकता को बदलकर ही किया जा सकता है। इसी दूरदर्शिता को ध्यान में रखकर प्रेमचंद ने साहित्य के सहारे लोकमानस का परिष्कार करने का बीड़ा उठाया।

प्रेमचंद के कथा–साहित्य का मूल उद्देश्य था दृ स्त्री–मुक्ति। आलोचक शम्भूनाथ जी इसका समर्थन करते हुए लिखते हैं कि "प्रायः सभी उपन्यासों और कहानियों में प्रेमचंद ने सामाजिक कुप्रथाओं पर चोट की और स्त्री–मुक्ति की आवाज़ उठाई। वह सिर्फ सुधार में विश्वास नहीं करते बल्कि सामाजिक क्रांति भी चाहते हैं।"[3] प्रेमचंद के साहित्य में शहरी, ग्रामीण, कृषक, मजदूर व अभिजात्य वर्ग की स्त्री पात्रों को आसानी से देखा जा सकता है। ये सभी पात्र कल्पना के माध्यम से सृजित नहीं की गई है बल्कि हाड़–मांस की जीती जागती स्त्रियाँ हैं। इसमें माँ, पत्नी, प्रेमिका, बहन, दोस्त, सौतेली माँ, वेश्या, ननद, भाभी, देशप्रेमी, परिचारिका, आश्रिता, आधुनिका स्त्रियों के दर्शन होते हैं। प्रेमचंद शुरू से ही आर्य समाज द्वारा संचालित स्त्री–सुधार संबंधी आंदोलन के उत्साही समर्थक थे। देश के तत्कालीन राजनीतिक परिदृश्य में, महात्मा गांधी की अगुआई में अनेक स्त्रियाँ अपने परंपरागत सोच को तिलांजलि देकर स्वाधीनता संघर्ष में सक्रिय थीं। प्रेमचंद नारी स्वतंत्रता के समर्थक थे, देश के सामाजिक–राजनीतिक कार्यकलापों में वे उसकी उपस्थिति के पक्ष में थे। लेकिन स्त्री–स्वाधीनता को पश्चिम के नारीवादी आंदोलनों के रूप में स्वीकार नहीं करते थे। उनकी लेखनी में स्त्रियां पारिवारिक और राजनीतिक दोनों ही क्षेत्रों में अपना सशक्त किरदार अदा करती हैं। प्रेमचंद स्त्रियों को कैद नहीं करते बल्कि उन्हें घर से बाहर भी निकालते हैं और चहारदीवारी के अंदर भी उनकी महत्ता को स्थापित करते हैं।

'कर्मभूमि' उपन्यास में भारत की तत्कालीन राजनीतिक स्थिति को दर्शाया गया है। इस उपन्यास में प्रेमचंद ने अंग्रेजी शासन के विरोध में पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं को भी खड़ा किया है। "कर्मभूमि (1932) प्रेमाश्रम की अगली मंजिल है। प्रेमाश्रम में केवल किसान लड़ाई के मैदान में थे, कर्मभूमि में उनके साथ मजदूर, छात्र, मध्यवर्ग, हिन्दू, मुसलमान, स्त्री–पुरुष, धनी–निर्धन आदि सभी लोग हैं।"[4] उन्होंने स्त्री को केवल कोमलांगी और सौंदर्य की प्रतिमूर्ति नहीं माना है बल्कि पुरुषों के साथ कदम से कदम मिलाकर साथ चलने वाली संघर्षशील स्त्री के रूप में चित्रित किया है। निर्मला और सेवासदन के कथा–विन्यास व उसके आरंभिक विकास में, एक आश्चर्यजनक समानता दिखाई देती है। जो स्थिति सुमन को वेश्यावृत्ति के नरक में धकेलती है, पिता की आकस्मिक गिरफ्तारी के परिणामस्वरूप परिवार की आय की समाप्ति, वही निर्मल को अनमेल विवाह के लिए विवश करती है। दोनों का परिणाम स्त्री को ही भुगतना होता है। प्रेमचंद दहेज प्रथा के दुष्परिणामों को विस्तारपूर्वक अंकित करते हैं। वे, इस समस्या के निदान के लिए, युवाओं द्वारा पहल करने के महत्व को भी रेखांकित करते हैं। 'गबन' उपन्यास की जालपा और 'रंगभूमि' की सोफिया अपनी वैचारिक दृढ़ता की कहानी स्वयं कहती हैं। गबन में जालपा एक ओर अपने पति पर सब कुछ न्योछावर करने वाली पत्नी का किरदार निभाती है तो दूसरी ओर उसका उसका क्रांतिकारी रूप देखकर आश्चर्य होता है। जालपा सबल चरित्र का अनुपम उदाहरण है जो बिना झगड़े तत्परता और बहादुरी से ज़िंदगी की जद्दोज़हद से जूझती है। वह अपनी समझ से अपना रास्ता चुनती है। रूढ़िवादी संस्कारो को त्यागते हुए ज्ञान के उदात्त रूप को अपनाती है। गबन के पैसे से मिला चंदहार उसे स्वीकार नहीं लेकिन पति का साथ भी कभी नहीं

छोड़ती है। रंगभूमि उपन्यास में तत्कालीन सम्पूर्ण भारत के जनमानस की कथा–व्यथा को चित्रित किया गया है। ग्रामीण जीवन में उपस्थित मद्यपान तथा दुर्दशा का भयावह चित्रण है। इस उपन्यास में देश की आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक व्यवस्था को आधार बनाया गया है। इसमें सोफिया ऐसी स्त्री–पात्र है जो राजनीति में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लेती है। सोफिया धर्म में तो विश्वास करती है किंतु धार्मिक अंधविश्वास को नकार देती है। 'गोदान' की धनिया सशक्त इरादों वाली, निडर और धैर्यवान स्त्री है। जो यथासंभव और यथाप्रसंग अन्याय के प्रति अपना प्रतिरोध ज़ाहिर करती है। वहीं दूसरी पात्र झुनिया सामाजिक नियमों को चुनौती देती है। प्रेमचन्द ने अपने उपन्यासों में इसी चरित्र–परम्परा को आगे बढ़ाया। "यद्यपि उनका प्रमुख लक्ष्य समकालीन जीवन को, उसकी समस्याओं और संघर्षों के साथ प्रस्तुत करना है, पर जिस मानव समूह को वे अपने कथ्य का माध्यम बनाते हैं, उसे उसकी पूरी वास्तविकता और अन्तरंगता के साथ प्रस्तुत करने का प्रयास भी करते हैं। प्रेमचन्द के कथासंसार में नाना प्रकार के सैकड़ों पात्र हैं जो वास्तविक व्यक्तियों की तरह जीते, महसूसते, सोचते और आचरण करते हैं।"[5] यह उनकी शैलीगत विशेषता भी है।

प्रेमचंद वेश्यावृत्ति की समस्या को एक सामाजिक समस्या के रूप में अंकित करते हैं। "हिन्दू समाज में आर्य समाज की इस दौर में पर्याप्त क्रांतिकारी भूमिका थी। स्त्री की शिक्षा, बाल विवाह का विरोध और विधवाओं के पुनर्विवाह का सवाल उसके मुख्य एजेंडे पर थे। दूसरी ओर पहले विश्व युद्ध के शुरू होते–होते महात्मा गांधी दक्षिण अफ्रीका से लौट आए थे। समाज और भारतीय राजनीति में परिवर्तन की यह आहट सुनने वालों में प्रेमचंद भी थे प्रेमचंद वेश्यावृत्ति की समस्या को अशिक्षा और दहेज से जोड़कर देखते हैं। इसी कारण समाज में अधिकांश अनमेल विवाह होते हैं जो स्त्री के जीवन को भयानक यातना में बदल देते हैं।"[6] सेवासदन उपन्यास में दरोगा कृष्णचंद पुलिस के महकमें में होने पर भी रिश्वत जैसी बुराई से अपने को प्रयत्नपूर्वक बचाते रहे थे। लेकिन बेटी के विवाह का अवसर आने पर उनका यह सद्‌गुण ही उसका दुर्गुण बन जाता है। पत्नी की नाराज़गी को और अधिक न झेल पाने के कारण वह पहली बार रिश्वत लेने का प्रयास करता है और उसी में पकड़ा जाता है। प्रेमचंद ने अपार धैर्य से और विश्वसनीय रूप में, यह दिखाने की कोशिश की है कि स्त्री शिक्षा के अभाव में परिवार के एक मात्र कमाऊ सदस्य के अभाव में पूरा परिवार कैसे बिखर जाता है। आगे की सारी घटनाएँ- वेश्यावृत्ति जिसकी अंतिम परिणति है, यहीं से पैदा होती है।

'सुखदा' के माध्यम से प्रेमचंद स्त्री की सामाजिक स्थिति का सवाल उठाते हैं। वह सामंतवादी मूल्य–दृष्टि को नारी के स्वतंत्र विकास में सबसे बड़ी बाधा मानते हैं। अपने पहले के उपन्यासों में भी प्रेमचंद अनमेल विवाह के दुष्परिणामों का संकेत करते रहे थे, यहाँ नैना के प्रसंग में वे इस समस्या को फिर उठाते हैं। सुखदा खूब देख–भाल कर नैना को विवाह का सुझाव देती है और किसी कारणवश यदि गलत व्यक्ति का चुनाव हो गया है तो उसके साथ पूरे जीवन को नष्ट करने की अपेक्षा वह तलाक का समर्थन करती है। 'कर्मभूमि' में अनेक ऐसे नारीपात्र हैं, विभिन्न सामाजिक वर्गों और स्तरों के जो घर–परिवार के महत्व को समझकर भी उसके घेरे से बाहर निकलते हैं और राष्ट्रीय हित के सवालों में अपनी व्यापक हिस्सेदारी का प्रमाण देते हैं।

प्रेमचंद की कहानियों में भी ऐसी जागरूक स्त्रियों की संख्या कम नहीं है जो सामाजिक रूढ़ियों, शोषण आदि का विरोध करती हैं। 'आहुति' कहानी की रूपमणि समाज की आर्थिक विषमता का विरोध करती है। 'कुसुम' कहानी की कुसुम दहेज के लोभी पति का विरोध कर सामाजिक व्यवस्था को चुनौती देती है। 'शांति' कहानी की सुनीता विलासी पति के साथ किसी भी कीमत में समझौता करने को तैयार नहीं होती। 'रहस्य' कहानी की मंजुला पति के अनमेल विचारों के कारण अलग रहती है। वह किसी भी नैतिक व धार्मिक बंधनों की बेड़ियों में जबरदस्ती अपने आप को बांधना नहीं चाहती।

प्रेमचन्द की कहानियों में यह अशिक्षित, रूढ़ियों और अन्धविश्वासों में जकड़ी, सदियों से पुरुष व्यवस्था की मार झेलती, स्वाभाविक मानवीय अधिकारों से भी वंचित, किसी प्रकार की भी स्वतन्त्रता से रहित, मूक–बधिर और दशक के अन्त में अपनी सीमाओं को तोड़ती, मनुवादी व्यवस्था से विद्रोह करती स्त्री बार बार सामने आती है। इसके उदाहरण के रूप में 'रूहे हयात' (1921), 'नैराश्य लीला' (1923), 'नैराश्य', 'तेंतर' और 'निर्वासन' (1924), 'नरक का मार्ग' और 'धिक्कार' (1925), 'सोहाग का शव (1928), 'खुचड' (1929), 'पत्नी से पति' और 'जुलूस' (1930), 'होली का उपहार'' (1931) आदि कहानियाँ पेश की जा सकती हैं। 'नैराश्य लीला' (1925) में बाल विवाह और उसके बाद, गौना के पहले ही, लड़की के विधवा हो जाने का चित्रण किया गया है। परम्परागत सवर्ण हिन्दू समाज में, माता–पिता के स्नेहपूर्ण संरक्षण के बावजूद ऐसी लड़की का जीना मुश्किल हो जाता था। स्त्री दृ मुक्ति के प्रश्न को लेकर प्रेमचंद के दृष्टिकोण को व्यक्त करते हुए अलोचक रामविलास शर्मा लिखते हैं कि "प्रेमचंद से भिन्न जब हम दूसरे लेखकों के कथा–साहित्य में ऐसी नारी हूँढते हैं जिसके हृदय में अन्याय के प्रति ऐसा ही रोष हो, तब हमें निराश होना पड़ता है। हमारे महान मनोवैज्ञानिक लेखक, न नारी का अपमानित होना समझ पाते हैं, न उसके रोष को। उनकी कथा के ताने–बाने को हटाकर देखा जाए तो नारी उनके लिए वैसी ही वासना पूर्ति का साधन है – यदि इसकी सामर्थ्य भी उनमें हो–जैसे वह संपत्तिशाली वर्ग के लोगों के लिए रही है। प्रेमचंद नारी को मनुष्य का दर्जा देने के लिए लड़ रहे थे–बत्तीस करोड़ में सोलह करोड़ को जानवर के बदले इंसान समझने के लिए।"[7] यह स्पष्ट है कि प्रेमचंद अपने कथा–साहित्य में समाज की मूक जनता के साथ–साथ हाशिये पर खड़ी स्त्री की समस्याओं पर केवल चर्चा ही नहीं करते बल्कि स्त्री–मुक्ति का स्वर भी बुलंद करते हैं।

निष्कर्ष

प्रेमचंद का सम्पूर्ण साहित्य भारतीय जनमानस की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पहलुओं पर एक व्यापक दृ ष्टिकोण को लेकर रचा गया है। सामान्य हो या विशिष्ट, अनपढ़ व शिक्षित, उच्च कुल की स्त्री हो या तथाकथित निम्न कुल की, स्त्री जागरण की अलख जगाने के लिए प्रेमचंद घर–घर की स्त्रियों का आह्वान करते हैं। कथाकार का उद्देश्य स्त्रियों को उनकी समस्याओं से परिचित कराकर जागरूक व सचेत करना था ताकि वे अपनी प्रतिष्ठा की लड़ाई खुद लड़ सकें। प्रेमाश्रम की बिलासी व कर्मभूमि की मुन्नी, सलोनी, पठानिन आदि अनपढ़ होकर भी निडर और जागरूक हैं। गोदान की धनिया, मालती, सरोज आदि स्त्रियाँ 'नारी स्वतंत्रता' के प्रति जागरूक दिखाई देती हैं। प्रेमचंद के उपन्यासों में सामाजिक विषयवस्तु के साथ ही राजनीतिक क्षेत्र में सक्रिय भाग लेने वाली उनकी नायिकाओं ने अपनी अमिट छाप छोड़ी है। संघर्षरत और मेहनतकश स्त्रियाँ प्रेमचंद के कथा–साहित्य की जान हैं।

संदर्भ सूची

1. जैनेंद्र, 23 हिंदी कहानियाँ, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण दृ 2012, पृष्ठ सं.–11
2. मैनेजर पाण्डेय,
3. शम्भूनाथ, प्रेमचंद का मूल्यांकन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, संस्करण–1988, पृष्ठ संख्या दृ 26
4. बच्चन सिंह, हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, बारहवां संस्करण दृ 2021, पृष्ठ संख्या दृ 376

5. गोपाल राय, उपन्यास का इतिहास, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण दृ 2022, पृष्ठ संख्या दृ 140
6. मधुरेश, हिंदी उपन्यास का विकास, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, नौवां संस्करण दृ 2021, पृष्ठ संख्या – 35
7. रामविलास शर्मा, प्रेमचंद और उनका युग, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, बारहवां संस्करण दृ 2022, पृष्ठ संख्या – 41